





विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	P2: मध्यकालीन कविता - 1
इकाई सं. एवं शीर्षक	M2: आदिकाल की पृष्ठभूमि और परिस्थितियाँ
इकाई टैग	HND_P2_M2

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	प्रो. गिरीश्वर मिश्र
	कुलपति, महातमा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001
	ईमेल : <u>misragirishwar@gmail.com</u>
प्रश्नपत्र समन्वयक	प्रो. कृष्ण कुमार सिंह
	अधिष्ठाता, साहित्य विद्यापीठ
	महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001
	ईमेल : kks5260@gmail.com
इकाई लेखक	डॉ. रूपेश कुमार सिंह
	सहायक प्रोफेसर, हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग, साहित्य विद्यापीठ
	महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001
	ईमेल : <u>dr.roopeshsingh@gmail.com</u>
इकाई समीक्षक	प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित
	प्रोफेसर (सेवानिवृत्त), हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र)
	ईमेल : <u>suryadixit123@gmail.com</u>
भाषा संपादक	प्रो. गिरीश्वर मिश्र
	कुलपति, महातमा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001
	ईमेल : <u>misragirishwar@gmail.com</u>

पाठ का प्रारूप

- 1. पाठ का उद्देश्य
- 2. प्रस्तावना
- 3. आदिकाल की ऐतिहासिक घटनाएँ तथा राजनैतिक परिवर्तन
- 4. आदिकाल की धार्मिक मान्यताएँ, स्वरूप और विस्तार
- 5. आदिकाल का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन
- 6. कला और साहित्य की स्थिति
- 7. निष्कर्ष

HND : हिंदी	P2: मध्यकालीन कविता - 1	
	M2: आदिकाल की पृष्ठभूमि और परिस्थितियाँ	







1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- आदिकाल की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं का समाज पर पड़े प्रभावों से परिचित हो सकेंगे।
- आदिकाल में प्रचलित धर्म के स्वरूप और विस्तार को समझ सकेंगे।
- आदिकाल के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- कला और साहित्य की स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2. प्रस्तावना

साहित्य अपने समय के समाज की संवेदना और चेतना को अभिव्यक्त करता है। अतः साहित्य के द्वारा जैसे किसी युग के समाज को समझा जा सकता है, वैसे ही वह तत्कालीन परिवेश साहित्य को समझने में मदद करता है। आदिकाल हिंदी साहित्य का आरम्भिक काल है। इस काल के संबंध में कहा जाता है कि हिंदी साहित्य के इतिहास में यह सबसे उथल-पुथल का समय रहा है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस काल का समय संवत् 1050 से संवत् 1375 निर्धारित किया है। डॉ. नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में इसकी समय सीमा सातवीं शती के मध्य से चौदहवीं के मध्य तक मानी गयी है। अतः इस काल के परिवेश को ठीक ढंग से समझने के लिए आचार्य शुक्ल द्वारा निर्धारित समय सीमा के संबंध में विस्तार से और उसके पूर्व सातवीं शती के बाद की परिस्थितियों को संक्षेप में समझना आवश्यक है।

3. आदिकाल की ऐतिहासिक घटनाएँ और राजनैतिक परिवर्तन

राजनैतिक दृष्टि से यह काल अत्यंत उथल-पुथल का रहा है। इसकी भूमिका में देखें तो सम्राट हर्षवर्धन (सं. 663 से 703 वि.) अंतिम ऐसा शासक था जिसने सम्पूर्ण उत्तर भारत को राजनैतिक एकता के सूत्र में बाँधा और दूर-दूर तक विजय यात्रा की। हर्ष के साम्राज्य की राजधानी कल्नौज थी, जिसको उस समय वही सम्मान प्राप्त था जो मौर्य और गुप्त सम्राटों के समय में पाटलीपुत्र को था। हर्षवर्धन के निधन के बाद कल्नौज में कोई ऐसा सम्राट नहीं हुआ जो उसके साम्राज्य को संभाल पाता। इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दुस्तानी शासक जो कभी अफगानिस्तान तक शासन करते थे, उनके हाथ से अफगानिस्तान के साथ सिंध भी निकल गया। इस पूरे क्षेत्र पर अरबों का शासन हो गया। यद्यपि आठवीं सदी के पूर्वार्द्ध में कल्नौज का ही शासक यशोवर्मा (सं. 784 से 809 वि.) पुनः एक बार सम्पूर्ण मध्य देश (हिंदी प्रदेश) पर शासन करने में सफल हुआ, किन्तु उसके बाद हिन्दुस्तान की राजनैतिक एकता समाप्त हो गई जिसके कारण राजस्थान में गुर्जर प्रतिहार, बिहार-बंगाल में पाल वंशीय तथा महाराष्ट्र-कर्नाटक में राष्ट्रकूट राजाओं का उदय हुआ और इनके बीच उत्तर भारत पर वर्चस्व को लेकर संघर्ष शुरू हो गया। दसवीं सदी के मध्य तक गुर्जर प्रतिहारों की शक्ति कमजोर होने से राजस्थान सहित पूरे मध्य भारत (हिंदी प्रदेश) में अनेक छोटे-छोटे राज्यों का जन्म हुआ जिनमें चालुक्य, चंदेल, चौहान, परमार आदि मुख्य थे। क्षेत्र विस्तार को लेकर इन राज्यों में परस्पर युद्ध होने से हिन्दुस्तान में एक तरह की अराजकता-सी छा गई।

आपसी कलह और केन्द्रीय शक्ति के अभाव में दसवीं सदी में पुनः हिन्दुस्तान पर पश्चिम से विदेशी आक्रमण प्रारंभ हुए। इस बार के आक्रमणकारी पहले के आक्रमणकारियों से भिन्न थे। शक, यवन, हूण आदि आक्रमणकारियों ने जहाँ भारतीय धर्म और संस्कृति को अपना लिया था, वहीं इन्होंने भिन्न धर्म और संस्कृति के साथ भारत में प्रवेश किया। इनमें अपूर्व जीवनी शक्ति थी और ये इस्लाम के अनुयायी थे। पहला आक्रमण गजनी के तुर्कों का हुआ, जिन्होंने अरब के मुसलमानों के संपर्क में आकर इस्लाम को स्वीकार किया था। इनमें महमूद गजनवी (संवत् 1054 से संवत्

HND : हिंदी P2: मध्यकालीन कविता - 1



HND : हिंदी





1087) प्रमुख था, जिसने भारत पर कई बार आक्रमण किया और अनेक राजाओं को परास्त किया। उसका अंतिम आक्रमण संवत् 1082 में गुजरात के प्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर पर हुआ, जिसमें मंदिर बुरी तरह से नष्ट हो गया। महमूद गजनवी ने हिन्दुस्तान पर कुल सत्रह आक्रमण किये, किन्तु इन आक्रमणों के पीछे उसका उद्देश्य साम्राज्य विस्तार न होकर धन प्राप्त करना था। इसलिए कुछ उत्तर-पश्चिमी भारतीय राज्यों को छोड़कर उसने किसी भी राज्य को अपने साम्राज्य में नहीं मिलाया।

महमूद गजनवी के आक्रमण से सर्वाधिक क्षति कन्नौज के गुर्जर प्रतिहार वंश को हुई। इसका लाभ उठाकर जहाँ संवत् 1137 के लगभग गहड़वाल वंश के सरदार चंद्रदेव ने कन्नौज पर अपना अधिकार कर लिया, वहीं सकम्भरी के चौहानों को भी उत्कर्ष का अवसर मिला। चौहान राजा बीसलदेव ने झांसी, हिसार व दिल्ली को जीतकर अपने प्रदेश में मिला लिया। इस प्रकार मध्यदेश में दो प्रमुख राजवंशों का शासन था- कन्नौज का गहड़वाल वंश और दिल्ली-अजमेर का चौहान वंश। बारहवीं सदी के उत्तरार्ध में कन्नौज पर जयचंद और दिल्ली-अजमेर की राजगद्दी पर पृथ्वीराज का अधिकार था। ये दोनों एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी थे। इन दोनों के आपसी युद्धों के कारण प्नः एक बार हिन्द्स्तान पर विदेशियों को आक्रमण का अवसर प्राप्त हुआ। इस बार का आक्रमण साम्राज्य विस्तार के लिए था। म्हम्मद गोरी जयचंद और पृथ्वीराज चौहान दोनों को हराने में सफल रहा। इसके बाद पूर्व की दिशा में काशी तक उसने आधिपत्य स्थापित कर लिया। हिन्दुस्तान की व्यवस्था को संभालने के लिए उसने अपने सेनापित क्त्ब्दीन ऐबक को नियुक्त किया। सं. 1263 में गोरी की मृत्यु के बाद ऐबक दिल्ली में स्वतंत्र शासन करने लगा। उसके समय में प्रा मध्य देश दिल्ली साम्राज्य के अंतर्गत हो गया था। ऐबक के बाद उसके उत्तराधिकारी इल्त्तमिश (संवत् 1268 से 1293 तक) ने ग्वालियर और मालवा के राजाओं को हराकर दिल्ली सल्तनत में मिला लिया, किन्त् इसी समय हिन्द्स्तान पर चीन के उत्तरी भाग में निवास करने वाले मंगोलों का आक्रमण आरंभ हुआ। चंगेज खाँ के नेतृत्व में मंगोलों ने सिंध् नदी को पारकर पंजाब को जीत लिया। बलबन (सं. 1323 से 1343 वि. तक) के समय मंगोलों ने पुनः आक्रमण किया, लेकिन वे पंजाब से आगे नहीं बढ़ सके जिसके कारण उत्तर भारत में एक स्दढ़ त्रक शासन स्थापित हो गया।

उपर्युक्त घटनाओं से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हिन्दुस्तान की केंद्रीय सत्ता समाप्त होने के बाद कैसे धीरे-धीरे हिन्दू शासकों का पतन होता गया और हिन्दुस्तान में इस्लाम धर्म को मानने वाले शासकों की सत्ता स्थापित हुई। यद्यपि कुछ शासकों ने इसे रोकने का महत्वपूर्ण प्रयास किया, जिनकी आदिकालीन कवियों ने वीरगाथाएँ लिखीं किन्तु उनकी सफलता स्थाई न हो सकी।

4. आदिकाल की धार्मिक मान्यताएँ, स्वरूप और विस्तार

हिन्दुस्तान में मौर्यकाल से लेकर हर्षवर्धन के समय तक साम्राज्यवाद का बोलबाला रहा तथा धर्म और साम्राज्य में घिनिष्ठ सम्बन्ध बना रहा। मौर्यों ने बौद्ध धर्म तो गुप्त सम्राटों ने वैष्णव धर्म को अपनाया और प्रोत्साहन दिया, किन्तु हर्ष के समय इसमें परिवर्तन दिखाई पड़ता है। हर्ष ने जहाँ एक ओर कन्नौज में बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया तो दूसरी ओर प्रयाग जाकर ब्राह्मणों को दान भी दिया। इससे पता चलता है कि धर्म को लेकर राज्य की उदारता के कारण विभिन्न धर्मों को फलने-फूलने का अवसर प्राप्त हुआ। दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी में आये अरब यात्रियों के अनुसार उस समय हिन्दुस्तान में कुल बयालीस मतावलंबी थे जिनमें कुछ मत ऐसे थे जिनके मतावलंबियों की संख्या बहुत कम थी। इस युग में जिन प्रमुख सम्प्रदायों का प्रचार था उनमें जैन, बौद्ध, शैव, शाक्त, वैष्णव, वेदान्त आदि थे।

P2: मध्यकालीन कविता - 1







इस युग में जैन मत के अधिकतर मतावलम्बी वैश्य जाति के थे, जिनका झुकाव अहिंसा व्रत की ओर था। दक्षिण में इस सम्प्रदाय को राष्ट्रकूट राजाओं ने प्रश्रय दिया, जिसके कारण यह मत महाराष्ट्र के कृषकों में फैला और गुजरात के साथ राजपूताना और मालवा तक इसका विस्तार हुआ। आदिकाल से बहुत पहले इसकी दो शाखाएँ हो गईं थीं- दिगंबर तथा श्वेताम्बर। अवतारवाद की तरह इसमें चौबीस तीर्थकरों के नाम का भी विशेष महत्व प्रदर्शित किया गया। इस युग तक आते-आते जैन धर्म में मूर्ति-पूजा भी प्रारंभ हो गई थी।

जैन मत की तरह बौद्ध मत भी अपने आरम्भ के कुछ समय बाद से दो शाखाओं- महायान और हीनयान में विभाजित हुआ। महायान सम्प्रदाय की प्रगित व्यापक रूप से हुई। महायान ने योग को अपनाया जिसके कारण बोधिसत्व को योगी माना गया। संभवतः भगवान के रूप में बुद्ध की मूर्तिपूजा इसी सम्प्रदाय के लोगों ने प्रारंभ की और साधना के सिद्धांत भी निर्धारित किये। समय बीतने के साथ साधना-पक्ष के दो रूप हो गए- परमित नय तथा मंत्र नय। परमित नय का बहुत विस्तार नहीं हुआ किन्तु मंत्र नय में प्रचितत तांत्रिक धर्म-साधनाओं के प्रवेश के साथ उसका व्यापक प्रसार हुआ, जिसे बज्रयान कहा गया। धीरे-धीरे हठयोग और तंत्र के साथ मैथुन बज्रयान की साधना के अंग बन गये। इसको नियमित रूप देने और प्रचार का श्रेय सरहपा को जाता है। कालान्तर में इसमें शैव, शाक्त और वैष्णव देवी-देवताओं को भी शामिल कर लिया गया। विभिन्न बज्रयानी आचार्यों ने अलग-अलग विचार-धाराओं और पद्धतियों को लेकर प्रयोग और उसका प्रचार किया, जिसके कारण इसके अनेक रूप हुए जिनमें सहजयान और कालचक्रयान का विशेष महत्व है। सहजयानी ऐसे आचार्य थे जिन्होंने तंत्र-मंत्र का निषेध करते हुए पाखंड का खंडन किया और देवी-देवताओं को व्यर्थ ठहराया तथा कालचक्रयानी आचार्यों ने योग साधना को महत्वपूर्ण माना। आदिकाल में बौद्ध मत के इसी रूप का प्रचार प्रसार अधिक था।

आदिकाल में बौद्ध मत के महायान से प्रभावित सिद्धों और नाथों का व्यापक प्रभाव था। इसीलिये साहित्य के कुछ इतिहासकारों को इस काल का नाम सिद्ध-सामंत युग रखना उचित जान पड़ा। सिद्धों की संख्या चौरासी कही जाती है, जिनमें अधिकतर निम्न जाति के थे और नाथों की संख्या नौ थी। कुछ नाम दोनों में शामिल हैं, जैसे- मीननाथ, सिद्धपाद, जालंधरनाथ आदि। इससे यह पता चलता है कि सिद्ध मत और नाथ पंथ के बीच गहरा सम्बन्ध रहा है। सिद्ध मत में गुरु का विशेष महत्व है, जिसकी कृपा से साधना के द्वारा सिद्धि प्राप्त होती है। साधना के लिए पूर्ववर्ती समस्त तांत्रिक क्रियाएं इस मत में प्रवेश कर गईं। नाथ मत का जन्म भी तांत्रिक महायान के एक सम्प्रदाय से हुआ। इसके प्रवर्तक आदिनाथ अथवा स्वयं शिव माने जाते हैं। नाथ पंथ में गोरखनाथ का विशेष महत्व है, जिन्होंने हठयोग का उपदेश दिया, जिसके द्वारा साधक कुण्डलिनी को जाग्रत करता है। जाग्रत कुण्डलिनी क्रमशः षट्चक्रों को भेदकर अंतिम चक्र में पहुंचकर शिव से जा मिलती है। इसी को नाथ सम्प्रदाय में परमानंद अथवा आत्मा और परमात्मा की अभेद सिद्धि कहा गया।

आदिकाल तंत्र-मंत्र द्वारा सिद्धि प्राप्त करने का युग था, किन्तु प्राचीन काल से चले आ रहे शैव, शाक्त और वैष्णव मत के अनुयायी भी हिन्दुस्तान में थे। इस युग में प्रचित शैव मत ने अन्य मतों के संपर्क में आने के कारण अनेक रूप धारण किये, जिसके कारण पुनः इस मत की ओर लोगों का आकर्षण बढ़ा। राजपूत शासकों की इसमें अगाध निष्ठा थी। शैव मत के विस्तार से बौद्ध मत के अनुयायी कम होने लगे। जिस प्रकार शैव मत पर आदिकालीन विभिन्न मतों का प्रभाव पड़ा, उसी तरह सिद्ध और नाथ सम्प्रदाय पर शैव मत का प्रभाव दिखाई पड़ता है। तंत्र साधना और शैव उपासना के संपर्क से एक नए मत शाक्त का प्रादुर्भाव हुआ। इस मत में शक्ति के विभिन्न

HND : हिंदी P2: मध्यकालीन कविता - 1







रूपों उमा, काली, चामुंडा, चंडी आदि की आराधना की जाने लगी। कालान्तर में इस मत के अनुयायी उपासना पद्धित में भिन्न मत रखने के कारण दो भागों- दक्षिणाचारी और वामाचारी में बंट गए। इसमें दक्षिणाचारी रुद्राक्ष की माला का जाप करते थे तो वामाचारियों ने पशु-बिल के साथ पञ्च मकारों के विधान को अपनाया। आदिकाल में प्रचितत वैष्णव धर्म में विष्णु के चौबीस अवतारों की पूजा की गई, जिनमें दस मुख्य माने गए। इस समय तक बुद्ध को भी अवतार के रूप में मान्यता मिल गई थी। धीरे-धीरे त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश की भी पूजा होने लगी। इस प्रकार आदिकाल में प्रचित सभी धर्म एक दूसरे पर प्रभाव डालते और ग्रहण करते हैं, जिसके कारण तत्कालीन राजा और जनता दोनों में धार्मिक सिहष्णुता दिखती है।

विदेशी सत्ता के स्थापित होने के साथ हिन्दुस्तान में इस्लाम धर्म का प्रवेश होता है। यद्यपि जनता में इसका प्रभाव नगण्य था, किन्तु धार्मिक दृष्टि से इसके महत्व को कम करके नहीं देखा जा सकता है। स्पष्ट है कि आदिकाल में लोगों के सामने अनेक धर्मों को मानने का विकल्प था लेकिन ईमानदार धर्माचार्यों के अभाव में तंत्र-मंत्र और जादू-टोना के अंधविश्वास को मानने लगे।

5. आदिकाल का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन

आदिकालीन का समाज वर्ण-व्यवस्था पर आधारित होने के साथ जातियों में विभाजित था। वर्ण जन्म आधिरत हो चुका था। अतः व्यवसाय के आधार पर किसी की जाति को नहीं जाना जा सकता था। ब्राहमण कहे जाने वाले लोग कृषि से लेकर व्यापार तक करने लगे थे। कुछ वस्तुओं का व्यापार करना उनके लिए निषद्ध था, जैसे- शराब, मांस आदि। शिक्षा पर ब्राहमणों का एकाधिकार बना रहा। अलग-अलग व्यवसाय करने के कारण वर्ण एक होते हुए भी यह समुदाय अनेक जातियों और उपजातियों में विभाजित हो गया। इस काल में ब्राहमणों की तरह क्षत्रिय भी अनेक कार्यों के माध्यम से जीविकोपार्जन कर रहे थे। सैनिक सेवा देने वाले क्षत्रियों को राजपूत कहा जाने लगा। क्षत्रिय समुदाय में राजपूतों का विशेष महत्व था। आगे चलकर यह एक अलग जाति बन गई। ब्राहमण तथा क्षत्रिय की तरह वैश्य और शूद्र भी विभिन्न व्यवसायों को अपनाने के साथ अनेक जातियों और उप जातियों में बंट गये। शूद्र कही जाने वाली जातियों की स्थित खराब थी। उनको समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता था। अधिकतर समुदायों में विवाह अपनी ही जाति में किया जाता था। विवाह के लिए राजाओं द्वारा बल प्रयोग एक आम बात थी। राजा, सरदार आदि उच्च वर्ग के लोग एक से अधिक विवाह करते थे। उच्च वर्ग के लिए स्त्री विलास की वस्तु थी किन्तु इसके बावजूद उनको कुछ अधिकार और सम्मान प्राप्त था।

आदिकाल दो संस्कृतियों के मिलन का समय है। एक ओर देशी सत्ता के पतन के साथ गौरवशाली हिन्दू संस्कृति का हास हो रहा था तो दूसरी ओर मुस्लिम संस्कृति विदेशी सत्ता के साथ स्वयं को स्थापित कर रही थी। दोनों संस्कृतियों ने एक दूसरे पर प्रभाव डाला और ग्रहण किया जिसकी स्पष्ट छाप उस समय के संगीत, मेले, उत्सव आदि पर पड़ी।

6. कला और साहित्य की स्थिति

आदिकाल की कला धार्मिक आधार लिए हुए है। वास्तु और मूर्ति कला के सुन्दर नमूने तत्कालीन मंदिरों में देखने को मिलते हैं। कोणार्क, भुवनेश्वर और खजुराहो के साथ जैनियों द्वारा निर्मित गिरनार के मंदिर कला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। ग्यारहवीं शताब्दी में निर्मित खजुराहो के मंदिर में जैन, वैष्णव और शाक्त मतों का सिम्मिश्रण है, जो उस युग की धार्मिक सिहण्णुता का द्योतक है। इन मंदिरों में एक ओर वामाचार साधना की प्रतीक अश्लील मूर्तियाँ

HND : हिंदी P2: मध्यकालीन कविता - 1







हैं तो दूसरी ओर त्याग और आत्म संयम का सन्देश देते जैन मंदिर हैं। हिन्दुस्तान में मुस्लिम शासन स्थापित होने से मूर्ति कला को आघात पहुँचा। नये शासक इस्लाम को मानने वाले थे और इस्लाम धर्म में मूर्ति पूजा का विरोध है। अत: इस कला को मिलने वाला राजकीय संरक्षण समाप्त हो गया। चित्रकला को राजकीय संरक्षण मिला जिससे उसका विकास हुआ।

आदिकाल में लोक भाषा हिंदी के साथ संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश में भी साहित्य की रचना हो रही थी। इस युग में विरचित संस्कृत की रचनाओं का विशेष महत्व है। अपभ्रंश के कवियों ने भी अपने भावों को अत्यंत सहज सरल भाषा में प्रकट किया, किन्तु लोक की संवेदना को हिंदी भाषा ने ही प्रकट किया। राजाओं के दरबारों में कवियों को विशेष सम्मान प्राप्त था किन्तु, राजा और प्रजा के बीच समरसता का अभाव था। निरंतर युद्ध होने के कारण राजा प्रजा की ओर ध्यान नहीं दे पाते थे। फलत: राजा के प्रति प्रजा की सहानुभूति कम होती गई।

7. निष्कर्ष

आदिकाल प्रत्येक दृष्टि से उथल-पुथल का दौर रहा है। हिन्दुस्तान छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था। देश में कोई केन्द्रीय सत्ता नहीं थी। राजा एक दूसरे से क्षेत्र विस्तार और सुन्दर स्त्री को पाने के लिए युद्ध में संलग्न थे। उत्तर पश्चिम से विदेशी आक्रमणों ने स्थित को और खराब किया। लगातार युद्धों का खामियाजा जनता को भुगतना पड़ था। वह अपने को असुरक्षित और असहाय महसूस कर रही थी। राजा धर्म के प्रति सहिष्णु थे। जन सामान्य किसी भी धर्म को मानने के लिए स्वतंत्र था लेकिन सही मार्ग बताने वाले धर्माचार्यों का अभाव था। समाज में तंत्र-मंत्र, जाद्-टोना, अंधविश्वास आदि का बोल बाला था। एक ही वर्ण कई जातियों, उपजातियों में बँटा था। सामाजिक भेद-भाव एक सामान्य बात थी।